

Chapter पाँच

नन्द महाराज तथा वसुदेव की भेंट

इस अध्याय में बतलाया गया है कि नन्द महाराज ने अपने नवजात शिशु का जन्मोत्सव बड़े ही

धूमधाम के साथ मनाया। इसके बाद वे कंस को कर देने गए तथा अपने घनिष्ठ मित्र वसुदेव से मिले।

कृष्ण-जन्म से सारे वृन्दावन में अत्यधिक उल्लास था। हर व्यक्ति खुशी से फूला नहीं समा रहा था। इसलिए व्रजराज महाराज नन्द ने इस शिशु का जन्मोत्सव मनाना चाहा और उन्होंने इसे मनाया भी। इस महोत्सव में उन्होंने उपस्थित लोगों को मुँहमाँगी भेंटें दीं। उत्सव के बाद नन्द महाराज ग्वालों के ऊपर गोकुल की रक्षा का भार सौंपकर कंस को कर चुकाने के लिए स्वयं मथुरा गए। मथुरा में नन्द महाराज की भेंट वसुदेव से हुई। वे दोनों भाई-भाई थे। वसुदेव ने नन्द महाराज के भाग्य की सराहना की क्योंकि उन्हें ज्ञात था कि कृष्ण ने नन्द महाराज को अपना पिता मान लिया है। जब वसुदेव ने शिशु की कुशलता के विषय में नन्द महाराज से पूछा तो उन्होंने वृन्दावन के विषय में सारी बातें बतलाईं। वसुदेव यह सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए यद्यपि कंस द्वारा देवकी के अनेक शिशुओं के मारे जाने का शोक भी उन्होंने व्यक्त किया। नन्द महाराज ने वसुदेव को यह कहकर ढाढस बँधाया कि हर कार्य प्रारब्ध के अनुसार होता है, अतः जो इसे जानता है, वह दुखी नहीं होता। वसुदेव को गोकुल में अनेक उत्पातों की आशंका थी इसलिए उन्होंने नन्द महाराज को सलाह दी कि वे मथुरा में अधिक न रुकें अपितु जितनी जल्दी हो सके वृन्दावन लौट जाएँ। इस प्रकार नन्द महाराज ने वसुदेव से विदा ली और ग्वालों समेत अपनी-अपनी बैल-गाड़ियों में चढ़कर वृन्दावन लौट गए।

श्रीशुक उवाच

नन्दस्त्वात्मज उत्पन्ने जाताह्लादो महामनाः ।

आहूय विप्रान्वेदज्ञान्स्नातः शुचिरलङ्कृतः ॥ १ ॥

वाचयित्वा स्वस्त्ययनं जातकर्मात्मजस्य वै ।

कारयामास विधिवत्पितृदेवार्चनं तथा ॥ २ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—श्रीशुकदेव गोस्वामी ने कहा; नन्दः—महाराज नन्द; तु—निस्सन्देह; आत्मजे—अपने पुत्र के; उत्पन्ने—उत्पन्न होने में; जात—अभिभूत हुए; आह्लादः—अत्यधिक हर्ष; महा-मनाः—विशाल मन वाले; आहूय—बुलाया; विप्रान्—ब्राह्मणों को; वेद-ज्ञान्—वेदों के ज्ञाता; स्नातः—स्नान करके; शुचिः—अपने को शुद्ध करके; अलङ्कृतः—सुन्दर आभूषणों तथा नए वस्त्रों से सज्जित; वाचयित्वा—पाठ करके; स्वस्ति-अयनम्—(ब्राह्मणों द्वारा) वैदिक मंत्र; जात-कर्म—जन्मोत्सव; आत्मजस्य—अपने लड़के का; वै—निस्सन्देह; कारयाम् आस—सम्पन्न कराया; विधि-वत्—वैदिक विधान के अनुसार; पितृ-देव-अर्चनम्—पूर्वजों तथा देवताओं की पूजा; तथा—साथ ही साथ।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : नन्द महाराज स्वभाव से अत्यन्त उदार थे अतः जब भगवान् श्रीकृष्ण ने उनके पुत्र रूप में जन्म लिया तो वे हर्ष के मारे फूले नहीं समाए। अतएव स्नान द्वारा

अपने को शुद्ध करके तथा समुचित ढंग से वस्त्र धारण करके उन्होंने वैदिक मंत्रों का पाठ करने वाले ब्राह्मणों को बुला भेजा। जब ये योग्य ब्राह्मण शुभ वैदिक स्तोत्रों का पाठ कर चुके तो नन्द ने अपने नवजात शिशु के जात-कर्म को विधिवत् सम्पन्न किए जाने की व्यवस्था की। उन्होंने देवताओं तथा पूर्वजों की पूजा का भी प्रबन्ध किया।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर ने *नन्दस्तु* शब्दों के महत्त्व की व्याख्या की है। उनका कहना है कि *तु* शब्द वाक्य की पूर्ति के लिए नहीं आया क्योंकि यह वाक्य *तु* शब्द के बिना भी पूर्ण है। अतः *तु* का प्रयोग किसी भिन्न प्रयोजन से किया गया है। यद्यपि कृष्ण देवकी पुत्र के रूप में उत्पन्न हुए, किन्तु वसुदेव तथा देवकी *जातकर्म* का आनन्द नहीं उठा पाए थे। उल्टे, इसका आनन्द लिया नन्द महाराज ने जैसाकि यहाँ बतलाया गया है (*नन्दस्तु आत्मज उत्पन्ने जाताह्लादो महामनाः*)। जब नन्द महाराज वसुदेव से मिले तो वसुदेव ने यह प्रकट नहीं किया कि “तुम्हारा पुत्र कृष्ण तो वास्तव में मेरा पुत्र है। तुम तो आध्यात्मिक रूप से उसके पिता हो।” कंस के भय के कारण वसुदेव कृष्ण का जातकर्म नहीं मना सके। किन्तु नन्द महाराज ने इस अवसर का पूरा-पूरा लाभ उठाया।

जातकर्म नवजात शिशु के नाल काटते समय का उत्सव है। किन्तु कृष्ण को तो नन्द महाराज के घर ले जाया गया था अतएव इसके लिए कहाँ अवसर था! इस प्रसंग में विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर अनेक शास्त्रों के प्रमाणों से यह सिद्ध करना चाहते हैं कि कृष्ण ने यशोदा की कोख से योगमाया के पहले ही जन्म ले लिया था इसीलिए योगमाया उनकी छोटी बहन कही जाती हैं। भले ही नाल काटने के बारे में कुछ शंकाएँ हों और भले ही कृष्ण का नाल न काटा गया हो किन्तु जब भगवान् प्रकट होते हैं, तो ऐसी घटनाएँ यथार्थ मानी जाती हैं। कृष्ण ब्रह्मा के नथुनों से वराहदेव के रूप में प्रकट हुए तो ब्रह्मा को वराहदेव का पिता कहा जाता है। *कारयाम् आस विधिवत्* शब्द भी महत्त्वपूर्ण हैं। पुत्र-जन्म के हर्षातिरेक के कारण नन्द महाराज ने देखा ही नहीं कि पुत्र का नाल कटा अथवा नहीं। इस तरह उन्होंने बड़ी ही धूमधाम से उत्सव मनाया। कुछ विद्वानों के अनुसार कृष्ण वास्तव में यशोदा के पुत्र रूप में उत्पन्न हुए थे। जो भी हो, हम इस पचड़े में न पड़कर यह मान सकते हैं कि नन्द महाराज द्वारा कृष्ण के जन्म पर किया गया यह उत्सव उचित था। इसीलिए यह उत्सव हर जगह नन्दोत्सव कहलाता है।

धेनूनां नियुते प्रादाद्विप्रेभ्यः समलङ्कृते ।

तिलाद्रीन्सप्त रत्नौघशातकौम्भाम्बरावृतान् ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

धेनूनाम्—दुधारू गायों का; नियुते—बीस लाख; प्रादात्—दान में दिया; विप्रेभ्यः—ब्राह्मणों को; समलङ्कृते—पूरी तरह सज्जित; तिल-अद्रीन्—तिल (अन्न) के पहाड़; सप्त—सात; रत्न-ओघ-शात-कौम्भ-अम्बर-आवृतान्—रत्नों तथा सुनहरे किनारे वाले वस्त्रों से ढके ।

नन्द महाराज ने ब्राह्मणों को वस्त्रों तथा रत्नों से अलंकृत बीस लाख गौवें दान में दीं। उन्होंने रत्नों तथा सुनहरे गोटे वाले वस्त्रों से ढके तिल से बनाये गये सात पहाड़ भी दान में दिए।

कालेन स्नानशौचाभ्यां संस्कारैस्तपसेज्यया ।

शुध्यन्ति दानैः सन्तुष्ट्या द्रव्याण्यात्मात्मविद्यया ॥ ४ ॥

शब्दार्थ

कालेन—समय आने पर (स्थल तथा अन्य वस्तुएँ पवित्र हो जाने पर); स्नान-शौचाभ्याम्—स्नान तथा सफाई के द्वारा (शरीर तथा मलिन वस्तुएँ शुद्ध होती हैं); संस्कारैः—संस्कार द्वारा (जन्म शुद्ध होता है); तपसा—तपस्या द्वारा (इन्द्रियाँ शुद्ध होती हैं); इज्यया—पूजा द्वारा (ब्राह्मण शुद्ध बनते हैं); शुध्यन्ति—शुद्ध बनते हैं; दानैः—दान द्वारा (सम्पत्ति शुद्ध होती है); सन्तुष्ट्या—सन्तोष से (मन शुद्ध होता है); द्रव्याणि—सारी सम्पत्ति यथा गौवें, भूमि तथा सोना; आत्मा—आत्मा (शुद्ध बनता है); आत्म-विद्यया—आत्म-साक्षात्कार द्वारा ।

हे राजन्, समय बीतने के साथ ही, धरती तथा अन्य सम्पत्ति शुद्ध हो जाती हैं; स्नान से शरीर शुद्ध होता है और सफाई करने से मलिन वस्तुएँ शुद्ध होती हैं। संस्कार अनुष्ठानों से जन्म शुद्ध होता है, तपस्या से इन्द्रियाँ शुद्ध होती हैं तथा पूजा से और ब्राह्मणों को दान देने से भौतिक सम्पत्ति शुद्ध होती है। सन्तोष से मन शुद्ध होता है और आत्मज्ञान अर्थात् कृष्णभावनामृत से आत्मा शुद्ध होता है।

तात्पर्य : वैदिक सभ्यता के अनुसार वस्तुओं को किस तरह शुद्ध किया जाए, इसके विषय में ही ये आदेश हैं। शुद्ध किए बिना प्रयोग की जाने वाली हर वस्तु हमें कल्मषग्रस्त कर देगी। भारत में पाँच हजार वर्ष पूर्व, गाँवों तक में, यथा नन्द महाराज के गाँव में भी लोग जानते थे कि वस्तुओं को किस तरह शुद्ध किया जाता है, जिसके कारण वे कल्मषरहित जीवन बिताते थे।

सौमङ्गल्यगिरो विप्राः सूतमागधवन्दिनः ।

गायकाश्च जगुर्नेदुर्भेयो दुन्दुभयो मुहुः ॥ ५ ॥

शब्दार्थ

सौमङ्गल्य-गिरः—जिनकी वाणी से निकले मंत्र तथा स्तोत्र वातावरण को शुद्ध करते थे; विप्राः—ब्राह्मणगण; सूत—इतिहास गाने में पटु लोग; मागध—राजपरिवारों के इतिहास गाने में पटु लोग; वन्दिनः—सामान्य वाचक; गायकाः—गवैये; च—भी; जगुः—उच्चारण किया; नेदुः—बजाया; भेर्यः—एक प्रकार का वाद्य यंत्र; दुन्दुभयः—एक प्रकार का बाजा; मुहुः—निरन्तर।
ब्राह्मणों ने मंगलकारी वैदिक स्तोत्र सुनाए जिनकी ध्वनि से वातावरण शुद्ध हो गया।

प्राचीन इतिहासों या पुराणों को सुनाने वाले, राजपरिवारों के इतिहास सुनाने वाले तथा सामान्य वाचकों ने गायन किया जबकि गवैयों ने भेरी, दुन्दुभी आदि अनेक प्रकार के वाद्य यंत्रों की संगत में गाया।

व्रजः सम्मृष्टसंसिक्तद्वाराजिरगृहान्तरः ।

चित्रध्वजपताकास्रञ्जैलपल्लवतोरणैः ॥ ६ ॥

शब्दार्थ

व्रजः—नन्द महाराज के अधिकार वाला भू-क्षेत्र; सम्मृष्ट—अत्यन्त स्वच्छ की गई; संसिक्त—अच्छी तरह धोई गई; द्वार—दरवाजे; अजिर—आँगन; गृह-अन्तरः—घर के भीतर की सारी वस्तुएँ; चित्र—रंग-बिरंगी; ध्वज—झंडियाँ; पताका—झंडे; स्रक्—फूलों के हार; स्रैल—कपड़े के; पल्लव—आम की पत्तियों के; तोरणैः—विभिन्न स्थानों पर बनाए गए द्वारों के द्वारा (अलंकृत)।

नन्द महाराज का निवास व्रजपुर रंग-बिरंगी झंडियों तथा झंडों से पूरी तरह सजाया गया था और विभिन्न स्थानों पर नाना प्रकार के फूलों की मालाओं, वस्त्रों तथा आम की पत्तियों से तोरण बनाए गए थे। आँगन, सड़कों के पास के दरवाजे तथा घरों के कमरों के भीतर की सारी वस्तुएँ अच्छी तरह से झाड़ू बुहार कर पानी से धोई गई थीं।

गावो वृषा वत्सतरा हरिद्रातैलरूषिताः ।

विचित्रधातुबर्हस्रग्वस्त्रकाञ्चनमालिनः ॥ ७ ॥

शब्दार्थ

गावः—गौवें; वृषाः—बैल; वत्सतराः—बछड़े; हरिद्रा—हल्दी; तैल—तेल; रूषिताः—लेप किए गए; विचित्र—तरह-तरह के; धातु—रंगीन खनिज; बर्ह-स्रक्—मोरपंख के हार; वस्त्र—कपड़े; काञ्चन—सुनहरे गहने; मालिनः—मालाओं से सजाए हुए।

गौवों, बैलों तथा बछड़ों के सारे शरीर में हल्दी तथा तेल के साथ नाना प्रकार के खनिजों का लेप किया गया था। उनके मस्तकों को मोर पंखों से सजाया गया था, उन्हें मालाएँ पहनाई गई थीं और ऊपर से वस्त्र तथा सुनहरे गहनों से आच्छादित किया गया था।

तात्पर्य : भगवान् के भगवद्गीता (१८.४४) में आदेश दिया है—कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्मस्वभावजम्—खेती करना, गो-रक्षा तथा व्यापार वैश्यों के गुण हैं। नन्द महाराज वैश्य जाति के—खेतिहर—थे। किस तरह गायों की रक्षा करनी चाहिए और यह वैश्य जाति कितनी सम्पन्न थी

इसी का वर्णन इन श्लोकों में हुआ है। हम कल्पना भी नहीं कर सकते कि गौवें, बैल तथा बछड़ों की इतने सुन्दर ढंग से देखभाल की जाती होगी और उन्हें वस्त्रों तथा बहुमूल्य सुनहरी गहनों से इस तरह सजाया जाता होगा। वे लोग कितने सुखी थे। *श्रीमद्भागवत* में अन्यत्र वर्णन आया है कि महाराज युधिष्ठिर के काल में गौवें इतनी सुखी थीं कि उनके दूध से गोचर भूमि सिक्त हो जाती थी। यह है भारतीय सभ्यता। फिर भी उसी भारतवर्ष में न जाने कितने लोग वैदिक जीवन-शैली छोड़ने तथा *भगवद्गीता* की शिक्षाएँ न समझने के कारण कष्ट भोग रहे हैं।

महार्हवस्त्राभरणकञ्चुकोष्णीषभूषिताः ।

गोपाः समाययू राजन्नानोपायनपाणयः ॥ ८ ॥

शब्दार्थ

महा-अर्ह—अत्यन्त मूल्यवान्; वस्त्र-आभरण—कपड़ों तथा गहनों से; कञ्चुक—वृन्दावन में पहना जाने वाला विशेष वस्त्र, अँगरखा; उष्णीष—पगड़ी से; भूषिताः—अच्छी तरह सजे; गोपाः—सारे ग्वाले; समाययुः—वहाँ आए; राजन्—हे राजन् (महाराज परीक्षित); नाना—अनेक प्रकार की; उपायन—भेंटें; पाणयः—हाथ में लिए हुए।

हे राजा परीक्षित, ग्वाले अत्यन्त मूल्यवान् गहने तथा कंचुक और पगड़ी जैसे वस्त्रों से खूब सजे-धजे थे। इस तरह से सजधज कर तथा अपने हाथों में तरह-तरह की भेंटें लेकर वे नन्द महाराज के घर आए।

तात्पर्य : जब हम देहात के खेतिहर की पुरानी दशा पर विचार करते हैं, तो पता चलता है कि मात्र कृषि-उपज तथा गौवों की सुरक्षा के बल पर वह कितना समृद्ध था। किन्तु वर्तमान समय में कृषि की उपेक्षा की जा रही है और गो-रक्षा का परित्याग हो चुका है, जिससे खेतिहर की स्थिति दयनीय है और वह फटे-पुराने वस्त्र पहने रहता है। प्राचीन भारत और वर्तमान-कालीन भारत में यही अन्तर है। *उग्रकर्म* के अन्तर्गत उग्र कार्यकलापों द्वारा हम मानव सभ्यता के सुअवसर को खो रहे हैं।

गोप्यश्चाकर्ण्य मुदिता यशोदायाः सुतोद्भवम् ।

आत्मानं भूषयां चक्रुर्वस्त्राकल्पाञ्जनादिभिः ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

गोप्यः—ग्वालों की पत्नियाँ, गोपियाँ; च—भी; आकर्ण्य—सुनकर; मुदिताः—अत्यन्त प्रसन्न हुए; यशोदायाः—यशोदा माता के; सुत-उद्भवम्—पुत्र जन्म को; आत्मानम्—स्वयं; भूषयाम् चक्रुः—उत्सव में जाने के लिए अच्छी तरह से सज गईं; वस्त्र-आकल्प-अञ्जन-आदिभिः—उपयुक्त वस्त्रों, गहनों, काजल इत्यादि से।

गोपियाँ यह सुनकर अत्यधिक प्रसन्न थीं कि माता यशोदा ने पुत्र को जन्म दिया है, अतः वे

उपयुक्त वस्त्रों, गहनों, काजल आदि से अपने को सजाने लगीं।

नवकुङ्कुमकिञ्जल्कमुखपङ्कजभूतयः ।

बलिभिस्त्वरितं जग्मुः पृथुश्रोण्यश्चलत्कुचाः ॥ १० ॥

शब्दार्थ

नव-कुङ्कुम-किञ्जल्क—केसर तथा नव-विकसित कुंकुम फूल से; मुख-पङ्कज-भूतयः—अपने कमल जैसे मुखों में असाधारण सौन्दर्य प्रकट करते हुए; बलिभिः—अपने हाथों में भेंटें लिए हुए; त्वरितम्—जल्दी से; जग्मुः—(माता यशोदा के घर) गईं; पृथु-श्रोण्यः—स्त्रीयोचित सौन्दर्य के अनुरूप भारी नितम्बों वाली; चलत्-कुचाः—हिल रहे बड़े-बड़े स्तन।

अपने कमल जैसे असाधारण सुन्दर मुखों को केसर तथा नव-विकसित कुंकुम से अलंकृत करके गोपियाँ अपने हाथों में भेंटें लेकर माता यशोदा के घर के लिए तेजी से चल पड़ीं। प्राकृतिक सौन्दर्य के कारण उनके नितम्ब बड़े-बड़े थे तथा तेजी से चलने के कारण उनके बड़े-बड़े स्तन हिल रहे थे।

तात्पर्य : ग्वाले तथा ग्वालिनें देहातों में प्राकृतिक जीवन बिताते थे और स्त्रियों में सहज स्त्रियोचित सौन्दर्य विकसित होता था जिससे उनके नितम्ब और स्तन बड़े-बड़े होते थे। चूँकि आधुनिक सभ्यता में स्त्रियाँ प्राकृतिक जीवन नहीं बितातीं इसलिए उनके नितम्ब तथा स्तन प्राकृतिक ढंग से परिपुष्ट नहीं होते। बनावटी जीवन बिताने से स्त्रियों ने अपना प्राकृतिक सौन्दर्य खो दिया है भले ही वे अपने को स्वतंत्र तथा भौतिक सभ्यता में पुरःसर क्यों न मानती हों। ग्रामीण स्त्रियों का यह विवरण प्राकृतिक जीवन और गर्हित समाज के कृत्रिम जीवन के अन्तर का एक स्पष्ट उदाहरण है—विशेष रूप से पाश्चात्य देशों में जहाँ नग्न सौन्दर्य को क्लबों तथा दुकानों में तथा आम विज्ञापन के लिए सहज ही खरीदा जा सकता है। बलिभिः शब्द बतलाता है कि स्त्रियाँ स्वर्णमुद्राएँ, रत्नजटित मालाएँ, सुन्दर वस्त्र, दूर्वा, चन्दन लेप, पुष्प मालाएँ तथा स्वर्ण की थालों में विविध भेंटें लेकर गई थीं। ऐसी भेंटें बलि कहलाती हैं। त्वरितं जग्मुः शब्द सूचित करते हैं कि ग्रामीण स्त्रियाँ कितनी जल्दी समझ गईं कि माता यशोदा ने कृष्ण नामक अद्भुत बालक को जन्म दिया और वे कितनी प्रसन्न थीं!

गोप्यः सुमृष्टमणिकुण्डलनिष्ककण्ठ्य-

श्रित्राम्बराः पथि शिखाच्युतमाल्यवर्षाः ।

नन्दालयं सवलया व्रजतीर्विरेजु-

व्यालोलकुण्डलपयोधरहारशोभाः ॥ ११ ॥

शब्दार्थ

गोप्यः—गोपियाँ; सु-मृष्ट—अत्यन्त चमकीले; मणि—रत्नों से बने; कुण्डल—कान की बालियाँ पहने; निष्क-कण्ठ्यः—गले में पहना गया हार; चित्र-अम्बराः—रंगीन किनारे वाली पोशाकें पहने; पथि—यशोदा माई के घर के रास्ते में; शिखा-च्युत—उनके बालों से गिरे हुए; माल्य-वर्षाः—फूलों की मालाओं की वर्षा; नन्द-आलयम्—महाराज नन्द के घर को; स-वलयाः—हाथों में चूड़ियाँ पहने; व्रजतीः—जाती हुई; विरेजुः—अत्यधिक सुन्दर लग रही थीं; व्यालोल—हिलते; कुण्डल—कान की बालियों से युक्त; पयोधर—स्तन वाली; हार—फूलों के हारों से युक्त; शोभाः—अत्यन्त सुन्दर लगने वाली।

गोपियों के कानों में चमचमाते रत्नजटित बालियाँ थी और उनके गले में धातुओं के हाँस लटक रहे थे। उनके हाथ चूड़ियों से विभूषित थे, उनकी वेशभूषाएँ विविध रंगों की थीं और उनके बालों में लगे फूल रास्तों पर गिर रहे थे मानो वर्षा हो रही हो। इस प्रकार नन्द महाराज के घर जाते समय गोपियाँ, उनके कुंडल, उनके हिलते स्तन तथा मालाएँ अतीव सुन्दर लग रही थीं।

तात्पर्य : कृष्ण का स्वागत करने के लिए महाराज नन्द के घर जा रही गोपियों का वर्णन विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है। गोपियाँ सामान्य स्त्रियाँ नहीं थीं अपितु वे कृष्ण की ह्लादिनी शक्ति की अंश थीं, जैसाकि ब्रह्म-संहिता में कहा गया है—

आनन्दचिन्मयरसप्रतिभाविताभि-

स्ताभिर्य एव निजरूपतया कलाभिः ।

गोलोक एव निवसत्यखिलात्मभूतो

गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥

(ब्रह्म-संहिता ५.३७)

चिन्तामणिप्रकरसद्मसु कल्पवृक्ष-

लक्षावृतेषु सुरभीरभिपालयन्तम् ।

लक्ष्मीसहस्रशतसम्भ्रम सेव्यमानं

गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥

(ब्रह्म-संहिता ५.२९)

कृष्ण जहाँ भी जाते हैं, सदा ही गोपियों द्वारा पूजे जाते हैं। इसीलिए श्रीमद्भागवत में कृष्ण का इतना विशद् वर्णन हुआ है। श्री चैतन्य महाप्रभु ने भी कृष्ण का वर्णन इस प्रकार किया है—*रम्या काचिदुपासना व्रजवधूवर्गेण या कल्पिता*। सारी गोपियाँ अपनी-अपनी भेंटें लेकर कृष्ण के पास जा रही थीं क्योंकि वे भगवान् की नित्य संगिनी हैं। अब गोपियाँ वृन्दावन में कृष्ण के आविर्भाव का समाचार

पाकर इतनी अधिक प्रफुल्लित थीं।

ता आशिषः प्रयुञ्जानाश्चिरं पाहीति बालके ।

हरिद्राचूर्णतैलाद्भिः सिञ्चन्त्योऽजनमुज्जगुः ॥ १२ ॥

शब्दार्थ

ताः—सारी स्त्रियाँ, ग्वालों की पत्नियाँ तथा पुत्रियाँ; आशिषः—आशीर्वाद; प्रयुञ्जानाः—भेंट; चिरम्—दीर्घकाल तक; पाहि—आप व्रज के राजा बनें और इसके सारे निवासियों का पालन करें; इति—इस प्रकार; बालके—नवजात शिशु को; हरिद्रा-चूर्ण—हल्दी का चूर्ण; तैल-अद्भिः—तेल से मिश्रित; सिञ्चन्त्यः—छिड़काव करते हुए; अजनम्—अजन्मा भगवान् की; उज्जगुः—स्तुतियाँ कीं।

ग्वालों की पत्नियों तथा पुत्रियों ने नवजात शिशु, कृष्ण, को आशीर्वाद देते हुए कहा, “आप व्रज के राजा बनें और यहाँ के सारे निवासियों का दीर्घकाल तक पालन करें।” उन्होंने अजन्मा भगवान् पर हल्दी, तेल तथा जल का मिश्रण छिड़का और प्रार्थनाएँ कीं।

अवाद्यन्त विचित्राणि वादित्राणि महोत्सवे ।

कृष्णे विश्वेश्वरेऽनन्ते नन्दस्य व्रजमागते ॥ १३ ॥

शब्दार्थ

अवाद्यन्त—वसुदेव के पुत्रोत्सव पर बजाया; विचित्राणि—विविध प्रकार के; वादित्राणि—वाद्ययंत्र; महा-उत्सवे—महान् उत्सव में; कृष्णे—जब भगवान् कृष्ण; विश्व-ईश्वरे—सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के स्वामी; अनन्ते—असीम; नन्दस्य—महाराज नन्द के; व्रजम्—चरागाह में; आगते—आए हुए।

चूँकि अब सर्वव्यापी, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के स्वामी, अनन्त भगवान् कृष्ण महाराज नन्द की पुरी में पदार्पण कर चुके थे, अतएव इस महान् उत्सव के उपलक्ष्य में नाना प्रकार के वाद्ययंत्र बजाये गये।

तात्पर्य : भगवद्गीता (४.७) में भगवान् कहते हैं—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।

अभ्युत्थानमर्धमस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥

“जब-जब धर्म की हानि होती है और अधर्म का प्राधान्य होता है तब-तब हे भरतवंशी! मैं स्वयं अवतरित होता हूँ।” ब्रह्मा के एक दिन में, जब भी कृष्ण अवतरित होते हैं, तो वे वृन्दावन में नन्द महाराज के घर में ही आते हैं। कृष्ण सारी सृष्टि के स्वामी हैं (सर्वलोकमहेश्वरम्)। अतः न केवल नन्द महाराज के व्रज के पड़ोस में अपितु सारे ब्रह्माण्ड में तथा अन्य सभी ब्रह्माण्डों में भगवान् के शुभ आगमन पर वाद्ययंत्र बज उठे।

गोपाः परस्परं हृष्टा दधिक्षीरघृताम्बुभिः ।

आसिञ्चन्तो विलिम्पन्तो नवनीतैश्च चिक्षिपुः ॥ १४ ॥

शब्दार्थ

गोपाः—गवाले; परस्परम्—एक दूसरे से; हृष्टाः—प्रसन्न होकर; दधि—दही; क्षीर—ऑंटाया दूध (खीर); घृत-अम्बुभिः—घी के साथ मिले जल से; आसिञ्चन्तः—छिड़कते हुए; विलिम्पन्तः—लेप करके; नवनीतैः च—तथा मक्खन से; चिक्षिपुः—एक दूसरे पर फेंकने लगे।

गवालों ने प्रसन्न होकर एक दूसरे के शरीरों में दही, खीर, मक्खन तथा जल का घोल छिड़ककर इस महोत्सव का आनन्द लिया। उन्होंने एक दूसरे पर मक्खन फेंका और एक दूसरे के शरीरों में पोता भी।

तात्पर्य : इस कथन से हम समझ सकते हैं कि पाँच हजार वर्ष पूर्व दूध, दही तथा मक्खन की इतनी प्रचुरता थी कि न केवल खाने, पीने तथा भोजन बनाने के लिए पर्याप्त था अपितु उत्सव के अवसर पर बिना रोकटोक के ऐसे फेंका भी जाता था। मानव समाज में दूध, दही, मक्खन तथा ऐसे दूसरे पदार्थों की चाहे जितनी मात्रा प्रयुक्त की जाए इस पर कोई रोक न थी। हर व्यक्ति के पास दूध का प्रचुर संग्रह होता था और इससे विविध व्यंजन बनाकर लोग प्राकृतिक ढंग से स्वस्थ रहते और कृष्णभावनामृत में जीवन बिताते थे।

नन्दो महामनास्तेभ्यो वासोऽलङ्कारगोधनम् ।

सूतमागधवन्दिभ्यो येऽन्ये विद्योपजीविनः ॥ १५ ॥

तैस्तैः कामैरदीनात्मा यथोचितमपूजयत् ।

विष्णोराराधनार्थाय स्वपुत्रस्योदयाय च ॥ १६ ॥

शब्दार्थ

नन्दः—महाराज नन्द; महा-मनाः—जो गवालों में सर्वाधिक न्यायशील तथा माननीय पुरुष थे; तेभ्यः—गवालों को; वासः—वस्त्र; अलङ्कार—गहने; गो-धनम्—तथा गाएँ; सूत-मागध-वन्दिभ्यः—सूतों (प्राचीन गाथा गाने वालों), मागधों (राजवंशों की गाथा गाने वालों) तथा वन्दीजनों (सामान्य स्तुति गायकों) को; ये अन्ये—तथा अन्यो को; विद्या-उपजीविनः—विद्या के बल पर जीविका चलाने वाले; तैः तैः—उन उन; कामैः—इच्छाओं से; अदीन-आत्मा—महाराज नन्द, जो इतने वदान्य थे; यथा-उचितम्—जो उपयुक्त था; अपूजयत्—उनकी पूजा की अथवा उन्हें तुष्ट किया; विष्णोः आराधन-अर्थाय—भगवान् विष्णु को प्रसन्न करने के उद्देश्य से; स्व-पुत्रस्य—अपने पुत्र के; उदयाय—सर्वतोमुखी प्रगति के लिए; च—तथा।

उदारचेता महाराज नन्द ने भगवान् विष्णु को प्रसन्न करने के लिए गवालों को वस्त्र, आभूषण तथा गाएँ दान में दीं। इस तरह उन्होंने अपने पुत्र की दशा को सभी प्रकार से सँवारा। उन्होंने सूतों, मागधों, वन्दीजनों तथा अन्य वृत्ति वाले लोगों को उनकी शैक्षिक योग्यता के अनुसार दान दिया और हर एक की इच्छाओं को तुष्ट किया।

तात्पर्य : यद्यपि दरिद्रनारायण की चर्चा चलाना फैशन बन चुका है, किन्तु विष्णोराराधनार्थाय शब्दों का अर्थ यह नहीं है कि इस महान् उत्सव में नन्द महाराज ने जितने सारे लोगों को तुष्ट किया वे सब विष्णु थे। वे न तो दरिद्र थे न ही नारायण। प्रत्युत वे नारायण के भक्त थे और वे अपनी-अपनी शैक्षिक योग्यताओं द्वारा नारायण को तुष्ट करने वाले थे। अतः उन्हें तुष्ट करना भगवान् विष्णु को तुष्ट करने का अप्रत्यक्ष तरीका था। *मद्भक्तपूजाभ्यधिका (भागवत ११.१९.२१)* मेरे भक्तों की पूजा करना मेरी प्रत्यक्ष पूजा से बढ़कर है। वर्णाश्रम प्रणाली *विष्णु आराधना* के ही निमित्त है। *वर्णाश्रमाचारवता पुरुषेण परः पुमान् विष्णुराराध्यते (विष्णुपुराण ३.८.९)*। जीवन का चरम लक्ष्य भगवान् विष्णु या परमेश्वर को तुष्ट करना है। किन्तु असभ्य व्यक्ति या भौतिकवादी व्यक्ति जीवन के इस लक्ष्य को नहीं जानता। *न ते विदुः स्वार्थगतिम् हि विष्णुम् (भागवत ७.५.३१)* मनुष्य का असली स्वार्थ भगवान् विष्णु को तुष्ट करने में है। विष्णु को तुष्ट न करके अन्य भौतिक समझौतों द्वारा सुखी बनने का प्रयास (*बहिरर्थमानिनः*) सुख का गलत तरीका है। चूँकि विष्णु हर वस्तु के मूल हैं अतः यदि विष्णु प्रसन्न हो जाते हैं, तो हर व्यक्ति प्रसन्न होता है विशेष कर मनुष्य के बाल-बच्चे तथा कुटुम्बी सभी प्रकार से सुखी रहते हैं। नन्द महाराज अपने नवजात शिशु को सुखी देखना चाहते थे। यही उनका उद्देश्य था। इसीलिए वे विष्णु को प्रसन्न करना चाहते थे और विष्णु को प्रसन्न करने के लिए उनके भक्तों को यथा विद्वान् ब्राह्मणों, मागधों और सूतों को प्रसन्न करना आवश्यक था। इस तरह घुमा-फिरा कर उनका उद्देश्य अन्ततः भगवान् विष्णु को ही प्रसन्न करना था।

रोहिणी च महाभागा नन्दगोपाभिनन्दिता ।

व्यचरदिव्यवासस्त्रकण्ठाभरणभूषिता ॥ १७ ॥

शब्दार्थ

रोहिणी—बलदेव की माता, रोहिणी; च—भी; महा-भागा—परम भाग्यशालिनी (कृष्ण तथा बलराम को साथ-साथ पालने के कारण); नन्द-गोपा-अभिनन्दिता—नन्द महाराज तथा माता यशोदा द्वारा सम्मानित; व्यचरत्—इधर-उधर विचरण करने में व्यस्त; दिव्य—सुन्दर; वास—वेशभूषा; स्त्रक्—माला; कण्ठ-आभरण—गले के गहने से; भूषिता—विभूषित।

बलदेव की माता अति-भाग्यशालिनी रोहिणी नन्द महाराज तथा यशोदा द्वारा अभिनन्दित हुईं। उन्होंने भी शानदार वस्त्र पहन रखे थे और गले के हार, माला तथा अन्य गहनों से अपने को सजा रखा था। वे उस उत्सव में अतिथि-स्त्रियों का स्वागत करने के लिए इधर-उधर आ-जा रही थीं।

तात्पर्य : वसुदेव की दूसरी पत्नी रोहिणी को भी उनके पुत्र बलदेव समेत नन्द महाराज की देखरेख में रखा गया था। चूँकि उनके पति को कंस ने बन्दी बना लिया था अतएव वे अधिक प्रसन्न नहीं, किन्तु कृष्ण जन्माष्टमी अर्थात् नन्दोत्सव पर, जब नन्द महाराज अन्यो को वस्त्र तथा गहने दान में दे रहे थे तो उन्होंने रोहिणी को भी शानदार वस्त्र तथा गहने दिए जिससे वे उत्सव में सम्मिलित हो सकें। इस तरह वे भी अतिथि रूप में आर्यो स्त्रियों का स्वागत करने में व्यस्त थीं। कृष्ण तथा बलराम का एकसाथ पालन-पोषण करने का सौभाग्य पाने के कारण उन्हें *महाभागा* कहा गया है।

तत आरभ्य नन्दस्य व्रजः सर्वसमृद्धिमान् ।
हरेर्निवासात्मगुणै रमाक्रीडमभून्नृप ॥ १८ ॥

शब्दार्थ

ततः आरभ्य—उस समय से लेकर; नन्दस्य—महाराज नन्द का; व्रजः—व्रजभूमि, गौवों को पालने तथा संरक्षण प्रदान करने की भूमि; सर्व-समृद्धिमान्—सभी प्रकार के धन से ऐश्वर्यवान्; हरेः निवास—भगवान् के निवास स्थान का; आत्म-गुणैः—दिव्य गुणों से; रमा-आक्रीडम्—लक्ष्मी की लीलास्थली; अभूत्—बनी; नृप—हे राजा (परीक्षित)।

हे महाराज परीक्षित, नन्द महाराज का घर पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् तथा उनके दिव्य गुणों का शाश्वत धाम है फलतः उसमें समस्त सम्पदाओं का ऐश्वर्य सदैव निहित है। फिर भी कृष्ण के आविर्भाव के दिन से ही वह घर देवी लक्ष्मी की क्रीडास्थली बन गया।

तात्पर्य : *ब्रह्म-संहिता* (५.२९) में कहा गया है—*लक्ष्मीसहस्रशतसम्भ्रमसेव्यमानं गोविन्दमादि पुरुषं तमहं भजामि।* कृष्ण के धाम में लाखों लक्ष्मियाँ सेवा करती हैं। कृष्ण जहाँ भी जाते हैं, लक्ष्मी जी उनके साथ-साथ रहती हैं। लक्ष्मियों में प्रमुख हैं श्रीमती राधारानी। अतः व्रजभूमि में कृष्ण के आविर्भाव से यह सूचित हुआ कि प्रमुख लक्ष्मी राधारानी भी शीघ्र ही वहाँ प्रकट होंगी। नन्द महाराज का धाम पहले ही ऐश्वर्यवान था और जब से कृष्ण प्रकट हुए थे, वह सभी प्रकार से ऐश्वर्ययुक्त बन गया है।

गोपानोकुलरक्षायां निरूप्य मथुरां गतः ।

नन्दः कंसस्य वार्षिक्यं करं दातुं कुरूद्वह ॥ १९ ॥

शब्दार्थ

गोपान्—गवालों को; गोकुल-रक्षायाम्—गोकुल मण्डल की रक्षा के लिए; निरूप्य—नियुक्त करके; मथुराम्—मथुरा; गतः—गाए; नन्दः—नन्द महाराज; कंसस्य—कंस का; वार्षिक्यम्—वार्षिक कर; करम्—लाभांश; दातुम्—भुगतान करने के लिए; कुरु-उद्वह—हे कुरु वंश के रक्षक, महाराज परीक्षित।

शुकदेव गोस्वामी ने आगे कहा : हे महाराज परीक्षित, हे कुरुवंश के सर्वश्रेष्ठ रक्षक, उसके बाद नन्द महाराज ने स्थानीय ग्वालों को गोकुल की रक्षा के लिए नियुक्त किया और स्वयं राजा कंस को वार्षिक कर देने मथुरा चले गए।

तात्पर्य : चूँकि बालकों का वध किया जा रहा था और यह सबको ज्ञात हो चुका था अतः नन्द महाराज अपने नवजात शिशु के लिए अत्यधिक डरे हुए थे। इसलिए उन्होंने अपने घर तथा शिशु की रक्षा के लिए स्थानीय ग्वालों को नियुक्त कर दिया। वे तुरन्त ही मथुरा जाकर कर भुगतान करना चाह रहे थे और अपने नवजात शिशु के उपलक्ष्य में कुछ भेंट भी देना चाहते थे। वे शिशु के संरक्षण के लिए विभिन्न देवताओं तथा पितरों की पूजा कर चुके थे और सब को जी भर कर दान भी दे चुके थे। इसी तरह नन्द महाराज कंस को न केवल वार्षिक कर चुकता करना चाह रहे थे अपितु कुछ भेंट भी देना चाह रहे थे जिससे कंस भी तुष्ट हो जाए। उनकी एकमात्र चिन्ता यही थी कि अपने दिव्य शिशु कृष्ण की किस तरह रक्षा करें।

वसुदेव उपश्रुत्य भ्रातरं नन्दमागतम् ।

ज्ञात्वा दत्तकरं राज्ञे ययौ तदवमोचनम् ॥ २० ॥

शब्दार्थ

वसुदेवः—वसुदेव; उपश्रुत्य—सुनकर; भ्रातरम्—अपने मित्र तथा भाई; नन्दम्—नन्द महाराज को; आगतम्—मथुरा आया हुआ; ज्ञात्वा—जानकर; दत्त-करम्—पहले ही कर चुकता किया जा चुका था; राज्ञे—राजा के पास; ययौ—गया; तत्-अवमोचनम्—नन्द महाराज के डरे तक।

जब वसुदेव ने सुना कि उनके अत्यन्त प्रिय मित्र तथा भाई नन्द महाराज मथुरा पधारे हैं और वे कंस को कर भुगतान कर चुके हैं, तो वे नन्द महाराज के डरे में गए।

तात्पर्य : वसुदेव तथा नन्द महाराज का सम्बन्ध इतना घनिष्ठ था कि वे भाइयों की तरह रहते थे। यही नहीं, श्रीपाद मध्वाचार्य की टिप्पणियों से ज्ञात होता है कि वसुदेव तथा नन्द महाराज सौतेले भाई थे। वसुदेव के पिता शूरसेन ने एक वैश्य लड़की से शादी की जिससे नन्द महाराज उत्पन्न हुए। बाद में स्वयं नन्द महाराज ने एक वैश्य लड़की यशोदा से शादी की। इसलिए उनका परिवार वैश्य परिवार के नाम से विख्यात है। कृष्ण ने उनके पुत्र के रूप में वैश्य कर्मों को सँभाला (*कृषि गोरक्ष्य वाणिज्यम्*)। बलराम कृषि के लिए भूमि जोतने का प्रतिनिधित्व करते हैं इसीलिए वे अपने हाथ में सदैव हल लिए रहते हैं। कृष्ण गौवें चराते हैं अतएव वे अपने हाथ में बाँसुरी लिए रहते हैं। इस तरह दोनों भाई

कृषिरक्ष्य तथा गोरक्ष्य का प्रतिनिधित्व करते हैं।

तं दृष्ट्वा सहसोत्थाय देहः प्राणमिवागतम् ।

प्रीतः प्रियतमं दोर्भ्यां सस्वजे प्रेमविह्वलः ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

तम्—उसको (वसुदेव को); दृष्ट्वा—देखकर; सहसा—अचानक; उत्थाय—उठकर; देहः—वही शरीर; प्राणम्—प्राण; इव—मानो; आगतम्—लौट आया हो; प्रीतः—इतना प्रसन्न; प्रिय-तमम्—अपने प्रिय मित्र तथा भाई; दोर्भ्याम्—अपनी दोनों बाहुओं द्वारा; सस्वजे—गले मिले; प्रेम-विह्वलः—प्रेम तथा स्नेह से अभिभूत।

जब नन्द महाराज ने सुना कि वसुदेव आए हैं, तो वे प्रेम तथा स्नेह से अभिभूत हो उठे और इतने प्रसन्न हुए मानो उन्हें पुनः जीवन पा लिया हो। वसुदेव को अचानक उपस्थित देखकर वे उठ खड़े हुए और अपनी दोनों भुजाओं में लेकर गले लगा लिया।

तात्पर्य : नन्द महाराज वसुदेव से बड़े थे। इसीलिए उन्होंने वसुदेव को गले लगा लिया और वसुदेव ने उन्हें नमस्कार किया।

पूजितः सुखमासीनः पृष्ट्वानामयमादृतः ।

प्रसक्तधीः स्वात्मजयोरिदमाह विशाम्पते ॥ २२ ॥

शब्दार्थ

पूजितः—इस तरह प्रेम पूर्वक स्वागत किए गए वसुदेव; सुखम् आसीनः—सुखपूर्वक बैठने के लिए स्थान दिए गए; पृष्ट्वा—पूछकर; अनामयम्—शुभ प्रश्न; आदृतः—समादरित; प्रसक्त-धीः—अत्यन्त आसक्त होने के कारण; स्व-आत्मजयोः—अपने दोनों पुत्रों (कृष्ण तथा बलराम); इदम्—इस प्रकार; आह—पूछा; विशाम्-पते—हे महाराज परीक्षित।

हे महाराज परीक्षित, नन्द महाराज द्वारा, इस प्रकार आदरपूर्वक सत्कार एवं स्वागत किए जाने पर वसुदेव बड़ी ही शान्ति से बैठ गए और अपने दोनों पुत्रों के प्रति अगाध-प्रेम के कारण उनके विषय में पूछा।

दिष्ट्या भ्रातः प्रवयस इदानीमप्रजस्य ते ।

प्रजाशाया निवृत्तस्य प्रजा यत्समपद्यत ॥ २३ ॥

शब्दार्थ

दिष्ट्या—सौभाग्यवश; भ्रातः—हे भाई; प्रवयसः—अधिक आयु वाले आपका; इदानीम्—इस समय; अप्रजस्य—सन्तानहीन का; ते—आपका; प्रजा-आशायाः निवृत्तस्य—जिसे इस अवस्था में पुत्र प्राप्ति की आशा न रह गई हो, उसका; प्रजा—पुत्र; यत्—जो भी; समपद्यत—भाग्यवश प्राप्त हो गया।

मेरे भाई नन्द महाराज, इस वृद्धावस्था में भी आपका कोई पुत्र न था और आप निराश हो चुके थे। अतः अब जबकि आपको पुत्र प्राप्त हुआ है, तो यह अत्यधिक सौभाग्य का लक्षण है।

तात्पर्य : सामान्यतया वृद्धावस्था में पुत्र उत्पन्न नहीं किया जा सकता। यदि भाग्यवश कोई सन्तान उत्पन्न भी हो तो वह लड़की होती है। इस तरह वसुदेव ने अप्रत्यक्ष रूप से नन्द महाराज से पूछा कि उन्हें पुत्र उत्पन्न हुआ है या पुत्री। वसुदेव जानते थे कि यशोदा को कन्या उत्पन्न हुई है, जिसे वे चुरा लाए थे और उसके स्थान में पुत्र छोड़ आए थे। यह एक बहुत बड़ा रहस्य था और वसुदेव जानना चाहते थे कि नन्द महाराज को पहले से इसका भान है अथवा नहीं। किन्तु पूछने पर उन्हें पूर्ण विश्वास हो गया कि कृष्ण-जन्म तथा यशोदा की देखरेख में उनके छोड़े जाने का रहस्य अब भी गुप्त है। इससे किसी प्रकार का खतरा न था क्योंकि कंस को पता नहीं था कि इससे पहले क्या हो चुका है।

दिष्ट्या संसारचक्रेऽस्मिन्वर्तमानः पुनर्भवः ।

उपलब्धो भवानद्य दुर्लभं प्रियदर्शनम् ॥ २४ ॥

शब्दार्थ

दिष्ट्या—सौभाग्य से ही; संसार-चक्रे अस्मिन्—इस जन्म-मृत्यु वाले जगत में; वर्तमानः—विद्यमान होकर; पुनः-भवः—आपकी मेरी भेंट दूसरे जन्म की तरह है; उपलब्धः—मेरे द्वारा प्राप्त होकर; भवान्—आप; अद्य—आज; दुर्लभम्—यद्यपि इसे कभी घटित नहीं होना था; प्रिय-दर्शनम्—हे मित्र, आपको पुनः देखने के लिए।

यह मेरा सौभाग्य ही है कि मैं आपके दर्शन कर रहा हूँ। इस अवसर को प्राप्त करके मुझे ऐसा लग रहा है मानो मैंने फिर से जन्म लिया हो। इस जगत में उपस्थित रह कर भी मनुष्य के लिए अपने घनिष्ठ मित्रों तथा प्रिय सम्बन्धियों से मिल पाना अत्यन्त कठिन होता है।

तात्पर्य : चूँकि कंस ने वसुदेव को बंदी बना कर रखा था इसलिए मथुरा में होते हुए भी वे अनेक वर्षों तक नन्द महाराज का दर्शन नहीं कर सके थे। अतः जब वे फिर से मिले तो वसुदेव ने इस मिलन को दूसरा जन्म माना।

नैकत्र प्रियसंवासः सुहृदां चित्रकर्मणाम् ।

ओघेन व्यूह्यमानानां प्लवानां स्रोतसो यथा ॥ २५ ॥

शब्दार्थ

न—नहीं; एकत्र—एक स्थान में; प्रिय-संवासः—अपने प्रिय मित्रों तथा सम्बन्धियों के साथ रहना; सुहृदाम्—मित्रों का; चित्र-कर्मणाम्—हम सबका जिन्हें अपने विगत कर्म के कारण नाना प्रकार के फल भोगने होते हैं; ओघेन—बल के द्वारा; व्यूह्यमानानाम्—ले जाया जाकर; प्लवानाम्—जल में तैरने वाले तिनके तथा अन्य पदार्थों का; स्रोतसः—लहरों का; यथा—जिस तरह।

लकड़ी के फट्टे और छड़ियाँ एकसाथ रुकने में असमर्थ होने से नदी की लहरों के वेग से बहा लिए जाते हैं। इसी तरह हम अपने मित्रों तथा सम्बन्धियों से घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हुए भी

अपने नाना प्रकार के विगत कर्मों तथा काल की लहरों के कारण एकसाथ रहने में असमर्थ होते हैं।

तात्पर्य : वसुदेव दुख जता रहे थे क्योंकि वे तथा नन्द महाराज कभी एक-साथ नहीं रह पाये। फिर भी वे एकसाथ कैसे रह सकते थे? वसुदेव सावधान करते हैं कि घनिष्ठ सम्बन्ध होने पर भी हम सभी काल की लहरों के द्वारा अपने विगत कर्म-फलों के अनुसार दूर बहा लिए जाते हैं।

कच्चित्पशव्यं निरुजं भूर्यम्बुतृणवीरुधम् ।

बृहद्वनं तदधुना यत्रास्मे त्वं सुहृद्वतः ॥ २६ ॥

शब्दार्थ

कच्चित्—चाहे; पशव्यम्—गौवों की सुरक्षा; निरुजम्—बिना कष्ट या रोग के; भूरि—पर्याप्त; अम्बु—जल; तृण—घास; वीरुधम्—पौधे; बृहत् वनम्—विशाल जंगल; तत्—ये सारे प्रबन्ध वहाँ हैं; अधुना—अब; यत्र—जहाँ; आस्मे—रह रहे हैं; त्वम्—तुम, आप; सुहृत्-वृत्—मित्रों से घिरे हुए।

हे मित्र नन्द महाराज, आप जिस स्थान में रह रहे हैं क्या वहाँ का जंगल पशुओं-गौवों के लिए अनुकूल है? आशा है कि वहाँ रोग या कोई असुविधा नहीं होगी। वह स्थान जल, घास तथा अन्य पौधों से भरा-पुरा होगा।

तात्पर्य : मानव सुख के लिए पशुओं, विशेष रूप से गौवों की देखभाल करनी चाहिए। इसीलिए वसुदेव ने पूछा कि क्या जहाँ नन्द महाराज रहते हैं वहाँ पशुओं के लिए अच्छा प्रबन्ध है? समुचित मानव सुख के लिए गौवों की रक्षा का प्रबन्ध होना चाहिए। इसका अर्थ हुआ कि जंगल तथा घास और जल से पूर्ण पर्याप्त चरागाह होने चाहिए। यदि जानवर सुखी रहेंगे तो प्रचुर दूध मिलेगा जिससे मनुष्यों को तरह-तरह की वस्तुएँ प्राप्त हो सकेंगी जिनसे वे सुखपूर्वक जीवन बिता सकेंगे। भगवद्गीता (१८.४४) में आदेश है—*कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम्।* भला पशुओं को समुचित सुविधाएँ प्रदान किए बिना मानव समाज किस तरह सुखी बन सकता है? यह बहुत बड़ा पाप है कि लोग कसाईघर चलाने के लिए पशु-पालन कर रहे हैं। इस आसुरी कृत्य से लोग वास्तविक मानव जीवन का अपना अवसर विनष्ट कर रहे हैं। चूँकि वे कृष्ण के उपदेशों को कोई महत्त्व नहीं दे रहे इसलिए उनकी तथाकथित सभ्यता की प्रगति पागलखाने के लोगों के पागलपूर्ण प्रयासों की तरह है।

भ्रातर्मम सुतः कच्चिन्मात्रा सह भवद्ब्रजे ।

तातं भवन्तं मन्वानो भवद्भ्यामुपलालितः ॥ २७ ॥

शब्दार्थ

भ्रातः—मेरे भाई; मम—मेरे; सुतः—पुत्र (रोहिणी पुत्र बलदेव); कच्चित्—क्या; मात्रा सह—अपनी माता रोहिणी के साथ; भवत्-ब्रजे—अपने घर में; तातम्—पिता तुल्य; भवन्तम्—आपको; मन्वानः—सोचते हुए; भवद्भ्याम्—आप तथा आपकी पत्नी यशोदा द्वारा; उपलालितः—ठीक से पाले जाने से।

आप तथा यशोदा देवी के द्वारा पाले जाने के कारण मेरा पुत्र बलदेव आप दोनों को अपना माता-पिता मानता तो है न, वह आपके घर में अपनी असली माता रोहिणी के साथ शान्तिपूर्वक रह रहा है न!

पुंसस्त्रिवर्गो विहितः सुहृदो ह्यनुभावितः ।

न तेषु क्लिश्यमानेषु त्रिवर्गोऽर्थाय कल्पते ॥ २८ ॥

शब्दार्थ

पुंसः—मनुष्य का; त्रि-वर्गः—जीवन के तीन उद्देश्य (धर्म, अर्थ और काम); विहितः—वैदिक संस्कारों के अनुसार आदिष्ट; सुहृदः—सम्बन्धियों तथा मित्रों के प्रति; हि—निस्सन्देह; अनुभावितः—सही मार्ग में होने पर; न—नहीं; तेषु—उनमें; क्लिश्यमानेषु—क्लेश में पड़े हुए; त्रि-वर्गः—जीवन के तीन उद्देश्य; अर्थाय—किसी प्रयोजन के लिए; कल्पते—ऐसा हो जाता है।

जब किसी के मित्र तथा सम्बन्धीगण अपने-अपने पदों पर ठीक तरह से बने रहते हैं, तो वैदिक साहित्य में उल्लिखित उनके धर्म, अर्थ तथा काम लाभप्रद होते हैं। अन्यथा, मित्रों तथा सम्बन्धियों के क्लेशग्रस्त होने पर इन तीनों से कोई सुख नहीं मिल पाता।

तात्पर्य : वसुदेव ने नन्द महाराज से खेद व्यक्त किया कि पत्नी तथा सन्तानें होने पर भी वे उनका पालन करने का अपना कर्तव्य नहीं निभा पा रहे हैं अतएव वे दुखी हैं।

श्रीनन्द उवाच

अहो ते देवकीपुत्राः कंसेन बहवो हताः ।

एकावशिष्टावरजा कन्या सापि दिवं गता ॥ २९ ॥

शब्दार्थ

श्री-नन्दः उवाच—नन्द महाराज ने कहा; अहो—हाय; ते—तुम्हारे; देवकी-पुत्राः—तुम्हारी पत्नी के सारे पुत्र; कंसेन—कंस द्वारा; बहवः—अनेक; हताः—मारे गए; एका—एक; अवशिष्टा—बची हुई; अवरजा—सबसे छोटी; कन्या—कन्या; सा अपि—वह भी; दिवम् गता—स्वर्गलोक को चली गई।

नन्द महाराज ने कहा : हाय! राजा कंस ने देवकी से उत्पन्न तुम्हारे अनेक बालकों को मार डाला। और तुम्हारी सन्तानों में सबसे छोटी एक कन्या स्वर्गलोक को चली गई।

तात्पर्य : जब वसुदेव ने नन्द महाराज से यह जान लिया कि कृष्ण के जन्म तथा यशोदा की कन्या

से उनके बदले जाने का रहस्य अब भी खुला नहीं है, तो वे प्रसन्न थे कि सब कुछ ठीक से चल रहा है। यह कहकर कि वसुदेव की सबसे छोटी सन्तान उनकी पुत्री स्वर्गलोक चली गई, नन्द महाराज ने यह इंगित किया कि उन्हें यह ज्ञात नहीं कि यह कन्या यशोदा से जन्मी है और वसुदेव ने उसे कृष्ण से बदल लिया है। इस तरह वसुदेव की शंकाओं का निराकरण हो गया।

नूनं ह्यदृष्टनिष्ठोऽयमदृष्टपरमो जनः ।

अदृष्टमात्मनस्तत्त्वं यो वेद न स मुह्यति ॥ ३० ॥

शब्दार्थ

नूनम्—निश्चय ही; हि—निस्सन्देह; अदृष्ट—अनदेखा; निष्ठः अयम्—यही अन्त है; अदृष्ट—अदृष्ट प्रारब्ध; परमः—परम; जनः—संसार का हर जीव; अदृष्टम्—वही प्रारब्ध; आत्मनः—अपना ही; तत्त्वम्—परम सत्य; यः—जो; वेद—जानता है; न—नहीं; सः—वह; मुह्यति—मोहग्रस्त होता है।

प्रत्येक व्यक्ति निश्चय ही प्रारब्ध द्वारा नियंत्रित होता है क्योंकि उसी से मनुष्य के सकाम कर्मों के फल निर्धारित होते हैं। दूसरे शब्दों में, अदृष्ट प्रारब्ध के कारण ही मनुष्य को पुत्र या पुत्री प्राप्त होती है और जब पुत्र या पुत्री नहीं रहते, तो वह भी अदृष्ट प्रारब्ध के ही कारण होता है। प्रारब्ध ही हर एक का अनन्तिम नियंत्रक है। जो इसे जानता है, वह कभी मोहग्रस्त नहीं होता।

तात्पर्य : नन्द महाराज ने अपने छोटे भाई वसुदेव को यह कहकर ढाढस बंधाया कि अंततोगत्वा प्रारब्ध ही प्रत्येक बात के लिए उत्तरदायी है। वसुदेव को इस बात से दुखी नहीं होना चाहिए कि उसकी अनेक संतानें कंस द्वारा मार दी गई हैं अथवा इसलिए कि उनकी अन्तिम संतान जो एक कन्या थी, स्वर्गलोक को चली गई है।

श्रीवसुदेव उवाच

करो वै वार्षिको दत्तो राज्ञे दृष्टा वयं च वः ।

नेह स्थेयं बहुतिथं सन्त्युत्पाताश्च गोकुले ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ

श्री-वसुदेवः उवाच—श्री वसुदेव ने उत्तर दिया; करः—कर; वै—निस्सन्देह; वार्षिकः—वार्षिक (सालाना); दत्तः—दिया हुआ; राज्ञे—राजा को; दृष्टाः—देखा गया; वयम् च—हम दोनों; वः—तुम्हारा; न—नहीं; इह—इस स्थान में; स्थेयम्—रुकना, ठहरना; बहु-तिथम्—बहुत दिनों तक; सन्ति—हो सकते हैं; उत्पाताः च—अनेक उपद्रव; गोकुले—आपके घर गोकुल में।

वसुदेव ने नन्द महाराज से कहा : मेरे भाई, अब तो आपने कंस को वार्षिक कर चुका दिया है और मुझसे भी भेंट कर ली है, अतः इस स्थान पर अब अधिक दिन मत रुको। गोकुल लौट

जाना बेहतर है क्योंकि मैं जानता हूँ कि वहाँ कुछ उपद्रव हो सकते हैं।

श्रीशुक उवाच

इति नन्दादयो गोपाः प्रोक्तास्ते शौरिणा ययुः ।

अनोभिरनडुद्युक्तैस्तमनुज्ञाप्य गोकुलम् ॥ ३२ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—श्री शुकदेव गोस्वामी ने कहा; इति—इस प्रकार; नन्द-आदयः—नन्द महाराज तथा उनके साथी; गोपाः—ग्वाले; प्रोक्ताः—सलाह दिए जाने पर; ते—वे; शौरिणा—वसुदेव द्वारा; ययुः—उस स्थान से रवाना हो गए; अनोभिः—बैलगाड़ियों द्वारा; अनडुत्-युक्तैः—बैलों से जुती; तम् अनुज्ञाप्य—वसुदेव से अनुमति लेकर; गोकुलम्—गोकुल के लिए।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : जब वसुदेव ने नन्द महाराज को इस प्रकार सलाह दी तो नन्द महाराज तथा उनके संगी ग्वालों ने वसुदेव से अनुमति ली, अपनी-अपनी गाड़ियों में बैल जोते और सवार होकर गोकुल के लिए प्रस्थान कर गये।

इस प्रकार श्रीमद्भागवत के दसवें स्कंध के अन्तर्गत “नन्द महाराज तथा वसुदेव की भेंट” नामक पाँचवें अध्याय के भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुए।